त की मूर्च्छना पद्धति ही है। मूर्च्छना विधि से वर्तमान प्रचलित किसी एक थाट से किस प्रकार अन्य थाट
त किए जा सकते हैं वह निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

"मूर्च्छना" एक प्रकार का थाट या मेल है जिसमें सातों स्वरों का क्रमानुसार प्रयोग किया जाता है।
सकी दूसरी शर्त यह है कि ग्राम या सप्तक के प्रत्येक स्वर को आरम्भिक स्वर मानते हुए विभिन्न विकृत
रों के समूह प्राप्त करना। अतएव इस विधि से यदि हम शुद्ध स्वर वाले विलावत थाट के प्रत्येक स्वर
ा षडज या आरम्भिक स्वर मानकर आरोह-अवरोह करें तो हमें क्रमशः आधुनिक निम्न थाट प्राप्त होंगे—

(1) बिलावत थाट के प्रमुख स्वर षडज को आधार मानकर जो स्वरावलि प्राप्त हुई वह "बिलावल
ाट" हुई, अर्थात् स रे ग म प ध नी।

(2) यदि 'रिषभ' स्वर को आरम्भिक स्वर मानकर अर्थात् रिषभ स्वर से तार सप्तक के रिषभ स्वर
क उन्हीं स्वरों में गायन-वादन किया तो हमें इस स्वरावलि में गन्धार तथा निषाद् कोमल रूप में प्राप्त
ोंगे, जो आधुनिक 'काफीथाट' के स्वर हैं—स रे ग म म ध नी।

(3) इसी प्रकार यदि बिलावत थाट के शुद्ध गन्धार को आरम्भिक स्वर मानते हुए तार सप्तक के
न्धार तक आरोह-अवरोह किया जायेगा तो हमें क्रमशः कोमल रिषभ, गन्धार, धैवत और निषाद स्वरों की
स्वरावलि प्राप्त होगी जो आधुनिक 'भैरवी थाट' के स्वर होंगे, यथा—स रे ग म प ध नी।

(4) इसी प्रकार यदि मध्यम स्वर को आधार मानकर आरोह-अवरोह किया जायेगा तो हमें तीव्र
मध्यम वाला कल्याण थाट प्राप्त होगा जैसे—स रे ग म प ध नी।

(5) पंचम स्वर को आधार मानकर स्वरावलि बनाई जायेगी तो उससे षडज स्वर की स्वरावलि की
तरह शुद्ध स्वर वाला बिलावत थाट प्राप्त होगा जैसे—स रे ग म प ध नी।

(6) धैवत स्वर को आधार मानने पर हमें कोमल धैवत-निषाद और गन्धार युक्त स्वरावलि प्राप्त
होगी जो आधुनिक आसावरी थाट की भाँति होगी—स रे ग प ध नी।

(7) निषाद स्वर को आधार मानकर जब आरोह अवरोह किया जायेगा तो जो स्वर समूह प्राप्त होता
है उसमें मध्यम स्वर शुद्ध रिषभ तथा गन्धार कोमल, और पंचम स्वर एक श्रुति उतरा हुआ। प्रतीत होता
है। यह स्वरावली आधुनिक प्रचलित किसी भी थाट में प्रयुक्त नहीं की जाती।

प्राचीन जाति की परिभाषा एवं उसके दस लक्षण

भारतीय संगीत में "जाति" शब्द का कई प्रकार से प्रयोग किया गया है। जैसे दक्षिणी ताल-पद्धति
के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की चतस्त्र, तिस्त्र, खण्ड, मिश्र और संकीर्ण प्रकार की लय के लिए 'जाति भेद'
का प्रयोग किया जाता है।

उत्तरी संगीत में प्रयुक्त रागों के आरोह-अवरोह में लगने वाले स्वरों से रागों की जाति निश्चित की
जाती है, जैसे सात स्वरों का राग सम्पूर्ण-जाति का, छः स्वरों का राग षाडव जाति का और पाँच स्वरों का
राग औडव जाति का कहलाता है जिसे राग-जाति कहा गया है।

लेकिन प्राचीन 'जाति' से अभिप्राय है प्राचीन संगीत में प्रयुक्त शास्त्रीय (classical) गायन जिसे
'जातिगायन' कहा गया है। अर्थात् जिस प्रकार आज राग-पद्धति में राग-गायन किया जाता है ठीक उसी
प्रकार प्राचीन संगीत या भरत-संगीत में शास्त्रोक्त रीति से जो गायन किया जाता था उसे जातिगायन की
संज्ञा दी गई। 'जातियाँ' स्वरों के वे समुदाय या स्वर सन्निवेश थे जो रसात्मक थे और जो मधुर तथा मन
को आनन्द प्रदान करते थे। जातियों का स्वरूप, उसमें लगने वाले ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास आदि
विशेषताओं से बनता था। जातियों की उत्पत्ति का कारण ग्राम-मूर्च्छना पद्धति थी। विद्वानों के मतानुसार,
"जातियाँ वे धुन थीं जिनका उद्गम लोक-संगीत से हुआ।" अर्थात् लोकप्रिय धुन ही जातियों का आधा